वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारतीय गुटनिरपेक्ष नीति एवं नई विश्व व्यवस्था

*डॉ. मनोज कुमार सिंह

अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों के क्षितिज में पिछले पॉच–छः वर्षो से विद्वानों, पत्रकारों व राजनयिकों के मध्य पारस्परिक बातचीत और वैचारिक उद्गारों में नई विश्वव्यवस्था की अवधारणा सामने आयी है। सोवियत रूस के पतन और खाड़ी संकट के पश्चात सुनियोजित तरीके से पश्चिमी प्रचारतंत्र के माध्यम से यह प्रचारित किया जाने लगा है कि इस नई विश्वव्यवस्था की प्रकृति एक–ध्रुवीयता (UNIPOLARITY) के रूप में उभर आयी है या उभर रही है। पर एक तटस्थ पर्यवेक्षक के रूप में कई प्रश्न हमारे सामने आते है। उदाहरणार्थ–क्या इस नई विश्वव्यवस्था के प्रति प्रचारित प्रकृति के विषय से हम सहमत है? इस नई विश्वव्यवस्था की प्रकृति क्या है? इसकी प्रमुख विशेषताऐ क्या है? क्या यह स्थायी, विश्वसनीय व निर्भरता योग्य है?

सर्वप्रथम इस नई विश्वव्यवस्था के संदर्भ में यह समझ लेना चाहिए कि यह अभी अनिश्चित्ता की स्थिति में है इसकी प्रकृति अस्थायी है। स्वरूप ग्रहण करने की प्रक्रिया ने अभी परिपक्व व स्थायी रूप ग्रहण नहीं किया है। मेंरा अनुमान है कि अन्तर्राष्ट्रीय संबंधो में शक्ति अर्जन की प्रतिस्पर्द्धा के राष्ट्र शिकार बनेगें और इस रूप में भले ही कुछ समय तक यह लगे कि विश्व एक–ध्रुवियता की ओर अग्रसर है किन्तु ऐसा बहुत समय तक नहीं होगा। बहुध्रुविय विश्वव्यवस्था के उभरने की संभावना बहुत प्रबल है। चीन, जापान, जर्मनी, संयुक्त यूरोप तथा भारत ने इसके लिए आभास देना प्रारम्भ कर दिये हैं। सुरक्षा परिषद् के पुनः संगठन की मांग इसी दिशा की ओर संकेत है।

पहले राजनीति आर्थिक दिशा का निर्धारण करती थी, आज ठीक इसके विपरीत स्थिति है, आज आर्थिक सत्ताओं का बर्चस्व बढ़ा है और आर्थिक सत्ता ही राजनीति की दिशा निर्धारित करने में सक्षम हुई है। इससे आर्थिक व्यवस्था की अवधारणा से ही आज राज्यों के पारस्परिक मेंत्री संबंधों के समीकरण को समझा जा सकता है। आर्थिक सत्रा का प्रयोग एक राजनीतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल करना अन्तर्राष्ट्रीय संबंधो में आम बात देखी जा सकती है।

अब प्रश्न है कि इस नई विश्वव्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में भारत की विदेश नीति का क्या भविष्य है और उसकी दिशा क्या रही है? किसी भी देश की विदेश नीति के दो मुख्य आधार होते है– पहला देश की सुरक्षा तथा दूसरा विश्वशांति की स्थापना। पहला यथार्थ से जुड़ा है तथा दूसरा मानवता का आदर्श है। एक का संबंध ''स्व'' से है तथा दूसरे का ''पर'' से। सुरक्षा की अवधारणा देश हित से जुड़ती है, जिसके कई आंतरिक तथा वाह्य आयाम हैं। इस दृष्टि से निश्चित रूप से भारत की विदेश नीति का निराशाजनक स्थिति समझी जा सकती है। आर. भास्करन का कहना एक सीमा तक समाचीन है कि, ''भारत की भूमिका एक प्रेक्षक की अधिक रही है न कि एक सक्रिय अभिनेता की। एक प्रेक्षक सारे खेल को देख सकता है और कभी उसे चोट भी आ सकती है, और लाभ भी हो सकता है। अपने स्थान से वह (प्रेक्षक) दूसरे और अधिक लाभदायक खेलों पर प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकता है।''

भारत की विदेश नीति का मुख्य आधार गुट निरपेक्षता रहा है। पर 1970 के बाद से यह गुटनिरपेक्षता सोवियत खेमें के प्रति जुड़ती चली गई। यह देश हित की मांग थी। इससे पूंजीवादी खेमा भारत के प्रति सदैव अविश्वासी बना रहा। सोवियत रूस के पतन के पश्चात भारत की स्थिति किंकर्तव्यविमुढ़ की बन गयी। सुरक्षा परिषद के एक स्थाई सदस्य रूपी मित्र से हमारा साथ समाप्त हुआ। पूंजीवादी खेमें ने भारतीय विदेश नीति को प्रत्येक अवसर पर घेरने का प्रयास बनाये रखा। भारत गुटनिरपेक्ष आंदोलन का सक्रिय सदस्य होने के कारण व उसे नेतृत्व देने के कारण जहॉ अन्तर्राष्ट्रीय राष्ट्रो की जमात में अपनी आवाज बुलंदी से रखता था और उसकी बातों को गौर से सुना जाता था, अब उसकी भूमिका अप्रभावी बन गयी। पाकिस्तान ने कश्मीर मुद्दे का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करने के प्रयास प्रारम्भ कर दिया। इस दिशा में अमेंरिका द्वारा शह दी जाती रही है। पाकिस्तान की आतंकवादी गतिविधियों की सक्रियता ने इस कड़वाहट को और अधिक बढ़ा दिया है। अमेंरिका द्वारा आणविक अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर के लिये बराबर दबाब डाला जाना भी हमारी स्वतंत्र विदेश नीति को प्रभावित करने की दिशा में एक कदम है।

देश की आजादी के बाद हमने मिश्रित अर्थ व्यवस्था के आदर्श को अपनाया किन्तु आज हम आर्थिक उदारीकरण के रास्त पर चल रहे हैं। पर यह आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया हमें निर्यातोन्मुखी बनाने तथा विश्व व्यापार में प्रभावी बनाने में अक्षम रही है।

हमारी विदेश नीति राजनीतिक अस्थिरता का भी शिकार हुई है। भारत में अनेक राजनीतिक शक्तियॉ उभरने के प्रयास में हैं–जातिवाद, साम्प्रदायिकता, क्षेत्रवाद एवं सस्ती लोक प्रियता के नाम पर लुभावने नारों के कारण भारतीय राजनीति का जो रूप बना है उससे राष्ट्र कमजोर हुआ है। अल्पमत की सरकारों के कारण भी निर्णय क्षमता कमजोर हुई है। दलीय गुटबंदी बढ़ी है और राष्ट्रहित की सामान्य वातों पर दलों में एकजुटता न रहने के कारण भी हमारी आवाज मंद पड़ी है। नेतृत्व के सामने उहापोह की स्थिति बनी हुयी है। इसका भारतीय गुटनिरपेक्ष नीति पर प्रभाव पड़ा है।

संबंधों का निर्धारण कभी एक तरफा (व्दम ूल) नहीं होता। भारत का पड़ोसियों के साथ मेंत्री एवं सहयोग की भावना रही है, किन्तु भारत के मुख्य पड़ोसियों की विदेश नीति भारत के प्रति वैमनस्यता एवं असहयोग की रही है। ऐसा क्यों? इसके अनेक कारण हो सकते हैं – भारत का आकार, महाशक्तियों की चालें एवं परिस्थितियॉ तथा भारत की स्वयं कुछ स्तरों पर गलतियॉ मुख्य रूप से गिनाये जा सकते हैं।

हम भारत पाक संबंधों को ही लेते है, भारत तथा पाकिस्तान के मध्य तनाव का क्या मुख्य कारण है ? पाकिस्तान का निर्माण भारत विरोध के आधार पर हुआ है, यद्यपि दोनों राष्ट्रों के मध्य काफी समानता है। पाकिस्तान भारत के जितना नजदीक है उतना वह मुस्लिम देशों के नजदीक नहीं है। पर

*अतिथि प्रवक्ता, राजनीति विज्ञान, शा. माधव महाविद्यालय, चन्देरी (अशोकनगर) म.प्र.

इसके बावजूद 1948, 1965, 1971 तथा 1999 कारगिल में दोनों के मध्य युद्ध हुये और दोनों के मध्य कटुता में उत्तरोत्तर वृद्धि आती गयी। देश विभाजन के साथ ही दोनों के मध्य संबंध्ा बिगड़ने के कई कारण थे। जैसे – सम्पत्ति का बटवारा, नदी जल के बटवारे का प्रश्न शरणार्थियों की समस्या और कश्मीर समस्या। कश्मीर समस्या ने तो स्थाई रूप ले लिया है आज सियाचीन विवाद, पाकिस्तानी परमाणु कार्यक्रम, पाकिस्तान द्वारा भारतीय राजनायिकों के प्रति गलत रूप से पेश आने की प्रवृत्ति ओर सबसे महत्वपूर्ण पाकिस्तान द्वारा आतंकवादी गतिविध्ायों को प्रोत्साहन से संबंध बदतर होते गये हैं।

आज भारतीय गुट निरपेक्षता की नीति के समक्ष निश्चित रूप से बाह्य एवं आंतरिक दबाव बढ़े हैं। और अंतराष्ट्रीय संबंधों में उसकी सक्रियता व गतिशीलता के लिये जटिलतायें भी बढ़ी हैं। पर इसी के साथ उसे सक्रिय होने की संभावनायें भी दिखाई दे रही हैं। इसलिये जरूरत है उसे घरेलू मोर्चे पर पहले सफल होने की। घरेलू मोर्चे को मजबूत बनाकर ही वह अन्तर्राष्ट्रीय विरादरी में अपनी गुट निरपेक्षता को प्रभावी रूप देने में सफल हो सकता है। हमें परम्परागत नीति में थोड़ा लचीलापन लाना होगा चीन से सहयोग बढ़ाना आवश्यक है। सोवियत संघ से अलग हुये राष्ट्रों से संबंधों का विस्तार देकर हमें व्यापार और उद्योगों के लिये नई संभावनाऐं पैदा करनी चाहिये। ऐशिया अफ्रीकी सहयोग को नया आयाम दे सकते हैं। इज्रायल से अपने संबंध और भी प्रगाढ़ कर सकते हैं। पड़ोसियों से संबंधों को नया रूप देकर वाह्य दबावों को कम करने में मदद मिलेगी। पर्यावरण एवं मानव अधिकार पर विशेष बल देने की आवश्यकता है, दक्षिण–दक्षिण सहयोग को बढ़ाने और संयुक्त राष्ट्र संघ को और भी अधिक प्रभावी बनाने की आज आवश्यकता है। वस्तुतः जितना ही अधिक इन क्षेत्रों में सफल होंगे, अपनी गतिविधियों को बढ़ायेगें उतना ही हम भारतीय गुटनिरपेक्षता की नीति को भी प्रभावशाली बनाने में मददगार हो पायेंगे। अन्यथा उत्तरोत्तर ह्रास की स्थिति होती जायेगी।

हमें यह नहीं भूलना चाहिये की सामाजवादी देशों के अस्तिव से गुटनिरपेक्ष आंदोलन को बल मिलता रहा है। उनके प्रोत्साहन से विकासशील देशों के सुदृढ़ और स्वतंत्र अर्थ व्यवस्था के विकास के लिये उत्तोलक की भूमिका मिलती थी। लेकिन आज के खुलेपन और पूंजीवादी लोकतंत्रीकरण की लहर ने विकासशील देशों को जर्जर करके रख दिया है। आज ये कर्ज के बोझ से डूबते जा रहे हैं और परनिर्भता बढ़ती जा रही है। वे याचक की स्थिति में आ गये हैं। आज की आर्थिक प्रगति के लिये पश्चिम की टेक्नोलाजी और पूंजी दोनों की अनिवार्यता वढ़ती जा रही है। अब भारत के सामने मुख्य समस्या यह है कि वह नव साम्राज्यवादी शक्तियों के भंवरजाल से अपने को बचाता हुआ स्वतंत्र आर्थिक प्रगति का रास्ता तैयार करे और ऐसा करते हुए वह न केवल गुटनिरपेक्ष आंदोलन को जीवित बना सकता है बल्कि विकासशील देशों को नया रास्ता भी दिखा सकता है। नयी विश्वव्यवस्था की पृष्ठभूमि में आर्थिक मजबूती ही हमें अन्य सफलताओं के लिये अग्रसर कर पायेगी। साथ ही हम विद्यमान चुनौती का सामना करने में सक्षम भी हो पायेंगे।

21वीं सदी में तीसरी दुनिया के देश तभी प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं जब वे आपसी सामंजस के साथ संगठित होकर विकसित देशों पर दबाव डालने में सामर्थ्य हासिल कर पाते हैं तभी गरीब देशों की बात को गंभीरता से लोग लेंगे अन्यथा उनका भविष्य उज्जवल नहीं कहा जा सकता है।

हमारी विदेश नीति की सफलता कुछ–कुछ हमारी गुटनिरपेक्षता की नीति की सफलता पर निर्भर रही है। इसलिये अन्तर्राट्रीय मंचों पर गुटनिरपेक्षता को शक्तिशाली बनाना हमारा दायित्व बनता है। शीतयुद्ध की समाप्ति के पश्चात वस्तुतः विदेश नीति की अवधारणायें और यथार्थतायें एकदम परिवर्तित हो गयी हैं। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति और भी जटिल हुई है। इतनी धारायें–अन्तरधारायें, हित, समस्यायें और स्वार्थ काम करते रहते हैं कि राष्ट्र की चालों के समझना मुश्किल हो जाता है।

पर आज भी गुट निरपेक्ष आंदोलन वह सबसे बड़ा मंच है जिसके माध्यम से विश्व के विकासशील राष्ट्र अपना दृष्टिकोण शेष विश्व, विशेष रूप से बड़ी शक्तियों के समक्ष रखते हैं। एक बार आंशिक रूप से यह स्वीकार भी कर लिया जाये कि शीतयुद्धोत्तर विश्व में गुटनिरपेक्षता की राजनीतिक संगति में कुछ कमी आयी हो तो भी विकासशील जगत के लिये आर्थिक न्याय की प्राप्ति के लिये प्रयास करने का सर्व प्रमुख साधन गुटनिरपेक्षता ही है।

हमारा कहना है कि सुधार ऐसा हो कि जिसमें विदेशी शोषण, कर्ज, हस्तक्षेप, निर्भरता से मुक्ति मिले। राष्ट्रो की जमात में समान प्रस्थिति प्राप्त हो तथा विश्वशांति, तथा मानवीय सुरक्षा का वातावरण पनपे। और यह तभी संभव हो पायेगा जव गुटनिरपेक्ष आंदोलन को और अधिक शक्तिशाली बनाया जाये।

संदर्भ :–

1. Ahmad, "Government and Politics of India" U.B.S. 1989
2. Chandra, J.K., " Foreign policy of major contriesaa" SUR
3. Dutt " Indian Foreign policy," Vikas Publishing Huose, 1992
4. Baffar Field, Harbert, " History and Human relations" London, Collins presaas, 1961
5. Deutsch, K.W., " Analisis of International relation," PHI, 1989, III Adition.
6. CaŸk and Saunders, A.M., " work population", New Yark. Oxford university presaas. 1936
7. Beard, charls A., " National Interesaat"
8. Chandr, " International Law, " Vikas Publication, 1992
9. B.L. Phadia, " Indian Government and politics " Sahitya Bhawan, Agra.
10. N.D. Arora, " Political Science", Tata MC-Graw-Hill's, New Delhi.
11. Pushpesaah Pant, " AnteŸkastriya Sangthan", Tata MC-Graw-Hills's, New Delhi.
12. S.C. Singhal, " International Relations", Laskmi Narayan Publication, Agra